ॐ सकल गुण विधानाय नमः

दशमों अध्यायः

श्रीकृष्ण अर्जुन संवाद

'ब्रह्म विद्या योग शास्त्र'

अध्याय

दोहा- प्रभु ने कुन्ती पुत्र को, समझाया हरचन्द।
पर सम्मोहित पार्थ के ज्ञान चक्षु थे बंद॥

जय-जय-जय ध्वनि हो रही थी नभ में उस काल।
मगन हो रहे ध्वजा पर, माँ अंजनी के लाल॥

क्या रखूँ मैं गुप्त प्रियवर, मित्र से क्या नेम है।
पांडु सुत सुन बचन, तुझको मुझसे अतिशय प्रेम है॥ 01

देव, ऋषि नहिं जानते लीला से मैं सम्पन्न हूँ।
सोचते हैं, मैं कहां, कैसे और क्यों उत्पन्न हूँ॥ 02

मैं अजन्मा, मैं अनादि भिन्न सबसे स्वत्व है।
इस तरह जो जानता, वह पाप फल से मुक्त है॥ 03

वे परम आनन्द मय हैं, शान्त हैं, मूर्धन्य हैं।
जानते जो भाव सारे, मुझसे ही उत्पन्न हैं॥ 04

सुख, दुःख, सन्तोष, ग्लानि विज्ञता या मूढ़ता।
भय, अभय, हिंसा, अहिंसा, वीरता या भीरूता॥ 05

सत्य, दम, सम नियम संयम, भाव या आभाव है।
व्याप्त होते भूतों में मुझसे ही सारे भाव हैं॥ 06

भावमय सप्तर्षि सातों और चौदह मनु हुये।
सब मेरे संकल्प हैं, जिनसे ये सारे जन हुये।। 07

जान लेता जो भी मेरी, योग रूपी शक्ति को।
प्राप्त होता है वो निश्छल योग रूपी भक्ति को।। 08

जानते हैं सारे कारण और निवारण मुझसे हैं।
अस्तु भजते हैं निरन्तर भक्त अर्जुन तुझसे हैं।। 09

भजते हैं, गुन गाते हैं, आपस में सब बतराते हैं।
प्राण, मन कर मुझको अर्पित मुझमें ही रम जाते हैं।। 10

ध्यानरत रह मुझमें ऐसे भक्त जब अनुरक्त हों।
पा के बुद्धि योग मुझसे, मुझमें ही संयुक्त हों।। 11

मिटता है अज्ञानतम मेरा अनुग्रह जानकर।
प्रज्ज्वलित हो ज्ञान दीपक मेरी आज्ञा मानकर।। 12

दोहा- सूर्य देव सुन रहे थे, रथ था अटल अडोल।
वासुदेव को नमन कर, अर्जुन बोले बोल।।

प्रभु पुरातन, परम पावन पुरुष हो, पर धाम हो।
देव, देवाधि देव, दिव्य अति दिव्य देदीप्यमान हो।। 13

ऋषि, महर्षि, देवर्षि, सबके ही ये संदर्भ हैं।
असित, देवल, व्यास, नारद, गाते सब गंधर्व हैं।। 14

देव, दानव या कि मानव सब ही संज्ञाहीन हैं।
आप क्या हैं जानने में सबकी ही गति क्षीण हैं।। 15

भूत, भूतेश्वर, जगत पति आपको सब मानते।
आप क्या हैं, यह तो बस, स्वयमेव प्रभु ही जानते।। 16

अस्तु प्रभु समझाइये, स्वयमेव इस विस्तार को।
किस तरह प्रभु एक थामे हो जगत के सार को।। 17

एक मेरी बुद्धि अगणित रूप प्रभु धारण करें।
हम भला किस रूप में प्रभु नाम उच्चारण करें।। 18

दोहा- कैसे भी सम्भव नहीं, अर्जुन मेरा अंत।
जिसका चाहे भजन कर, मेरे नाम अनन्त।।

हर हृदय में, मैं ही स्थित, मैं ही सबकी आत्मा।
आदि, अन्त और मध्य सबका मैं ही हूँ परमात्मा।। 19

अदिति सुत मैं विष्णु, वायु उन्चास का मैं तूर्य हूँ।
चंद्रमा नक्षत्र में हूँ, ज्योतियों में सूर्य हूँ।। 20

देवों में हूँ इन्द्र अर्जुन, वेदों में मैं 'साम' हूँ।
इन्द्रियों में मन और सारे भूतों का मैं ज्ञान हूँ।। 21

रूद्रों में शंकर हूँ, यक्षों, राक्षसों में कुबेर हूँ।
आठ वसुओं में हूँ, अग्नि, पर्वतों में सुमेर हूँ।। 22

मैं पुरोहित बृहस्पति हूँ, सेनापति स्कन्ध हूँ।
नदी, नद, नालों का अधिपति, मैं जलाशय सिन्धु हूँ।। 23

ऋषियों में भृगु एक अक्षर शब्द मैं ऊँकार हूँ।
यज्ञ, जप हूँ, और हिमगिरि वन धरा का भार हूँ।। 24

मैं हूँ पीपल, मैं हूँ नारद, चित्ररथ गंधर्व हूँ।
सिद्ध मुनियों में कपिल होकर मैं उनका गर्व हूँ।। 25

ऐरावत हूँ हाथियों में, उच्चश्रव में बाज हूँ।
और सारे मानवों का मैं ही तो नरराज हूँ।। 26

कामधेनु गाय हूँ मैं, शस्त्रों में मैं बज्र हूँ।
संतति हित काम हूँ, और मैं ही वासुकि सर्प हूँ।। 27

बरूण हूँ जलचर का अधिपति, शेषरूपी नाग हूँ।
पितर में हूँ अर्यमा और नृपों में यमराज हूँ।। 28

मैं समय हूँ, गणन कर्ता, दैत्यों में प्रहलाद हूँ।
पक्षियों में गरूड़, सब पशुओं में मैं मृगराज हूँ।। 29

मैं नदी भागीरथी पावन परम अविराम हूँ।
मछलियों में मगर एवं शस्त्र धारी राम हूँ।। 30

आदि, मध्य और अन्त में विद्याओं में अध्यात्म हूँ।
नीर क्षीर विवेक हित, हर प्रश्न का मैं वाद हूँ।। 31

दोहा- सामासिक विग्रह में भी, मैं हूँ द्वन्द्व समास।
सभी अक्षरों में मेरा, है अकार का भास।।

काल के भी बाद रहता, ऐसा अक्षय काल हूँ।
विश्व मुख हर जीव का करता मैं ही प्रतिपाल हूँ।। 32

मैं ही सबका जन्म कारक, और मृत्यु की अमा।
कीर्ति, लक्ष्मी, धृति, मेधा, वाक्, स्मृति और क्षमा।। 33

बृहत् साम गायन हूँ, अनुपम मैं गायत्री छन्द हूँ।
मार्गशीर्ष हूँ माह लेकिन, ऋतुओं में मैं बसन्त हूँ।। 34

छल में जुआ, और उत्तम पुरुषों का मैं प्रभाव हूँ।
जीत में जय, मन का निश्चय और सात्विक भाव हूँ।। 35

व्यास मुनि हूँ, कवि हृदय तो मैं ही शुक्राचार्य हूँ।
कृष्ण तो हूँ ही प्रकट, पर मैं ही अर्जुन आर्य हूँ।। 36

हर विजय की नीति अर्जुन, दमन कर्ता दण्ड हूँ।
मौन रहकर गुप्त तो ज्ञानी का ज्ञान अखण्ड हूँ।। 37

भूत कोई भी नहीं, मुझसे न जो आविष्ट है।
चर, अचर, चेतन या जड़, सबमें मेरा प्राविष्ट है।। 38

क्या कहूँ, विस्तार अर्जुन, जब न मेरा अन्त है।
और अब तक जो कहा, सब कुछ मेरा एक अंश है।। 39

अस्तु अद्भुत सृष्टि में जो दृश्य या अदृश्य है।
अंश मात्रक रूप से ही, मेरा वैभव व्यक्त है।। 40

दोहा- ज्ञानी, ज्ञान, गणेश, गुरू और सुर अन्तर्ध्यान।
सभी ठगे से रह गये प्रभु का सुना बखान।।

प्रभु के अनुपम रूप का, जो करते गुणगान।
कष्ट हरत, सब सुख करत, तिनके गृह भगवान।।

इति श्रीकृष्ण अर्जुन संवाद
ब्रह्म विद्या योग शास्त्र दशम् अध्याय समाप्त।